श्रावक द्वादश-व्रत-चतुष्पदिका

म. विनयसागर

इस लघु कृति में कवि ने श्रावक के सम्यक्त्वमूल द्वादश व्रत की रचना की है। अपभ्रंश भाषा में यह रचित है। श्री जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार, जैसलमेर में इसकी १६वीं सदी की प्रति प्राप्त होने से इसका रचनाकाल १५वीं शताब्दी प्रतीत होता है। इसमें कर्ता का नाम वर्णित नहीं है। प्राचीन अपभ्रंश शैली में द्वादश व्रतों का संक्षिप्त वर्णन इस कृति में प्राप्त होता है। किस श्रावक या श्राविका ने किस अधिकारी के मुख से व्रत ग्रहण किए थे, इसमें कोई उल्लेख नहीं है। सम्भवतः यह वर्णनात्मक रचना हो। कृति प्रस्तुत है :-

द्वादश व्रत चतुष्पदी

वंदवि वीरु भविय निसुणेहु, आगम कहिउ जिणेसरि एहु ।
पभणउ जिणवर धम्म महंतु, बारह व्रतह मूलि समकितु ॥१॥
अक्खर एक न पामउ पारु, निसुणह धम्मिय धम्म विचारु ।
सुकृत प्रभाविह सुग्रहो इइ, सासइ सिवसुह पावइ सोइ ॥२॥
जं जं जीव निकाचितु होइ त्रि(ब्रि?)सपति सूरि न पंडितू कोइ ।
त्रिसठि सुलाख पुरुषह जोइ, विणु वेइया न छूटइ कोइ ॥३॥
चउवीस तित्थंकर चक्रवर्ति बार, वासदेव नव नव बल धार ।
नव प्रतिवासदेव ते हूया, कर्म खपिउ ते सिद्धहि गया ॥४॥
भवियउ जीवदया पालेउ, पंच अणुव्रत पहिलउ एहु ।
जीव अजीवा तुम्हि पेखेहु, जिम तुम्हि सोसय सुख लहेउ ॥५॥
बीजउ अलीउ म जंपउ कोइ, सच्चु वदंता बहु फलु होइ ।
स तिहि धण कण कंचण रिद्धि, रुव्व लगिउ पामीजइ सिद्धि ॥६॥
त्रीजउं व्रत अदत्तादानु, जिण जगि सील होइ अपमान ।
परधन तणउं करउं परिहार, दुतरु जेम तरउ संसारु ॥७॥
जे कुलवंता हुयइ नरनारि, पालइ सुद्ध सीलु संसारि ।
चउत्था व्रतह तणउं फलु जोइ माणइ भोगविया सुरलोइ ॥८॥

व्रत पंचम तणउ सुणि भेउ परिग्रह तणउं प्रमाण करेउ ।
अणहूता मनमंगल देहु, तम्ह कोलीआ जेम वेटेहु ॥९॥
धम्मिय छट्ठउं व्रत निसुणेहु, दिग प्रामाणि तहिं तेमु करेहु ।
मन मोकल इंम मेल्हि असारि बहुत जोनि हिडिसि संसारि ॥१०॥
व्रत सत्तम तणउ सुणि बंधु भोग प्रभोगह करउं निबंध ।
पंचइ इन्द्रिय जे वसि करइं ते भवसायरु लीलइं तरइं ॥११॥
व्रत अट्ठम तणउ विचारु, अनरथ दंड करउ परिहारु ।
अनेक भेद जे धर्महं तणा एक जीहिं नहु जाअइ वर्णवा ॥१२॥
नवमइ व्रति सामायक लेउ, पडिकमणउं सिज्झायु करेउ ।
अणुदिणु थुणउ जिणेसर देउ, दुक्खिय कर्म जिम एम उछेउ ॥१३॥
दसमा व्रतह तणी विधि जोइ, जिम वलि आवागमणु न होइ ।
दस दिसि मनु पसरंतु निक(का)रि, जिणवर तणां चलण अनुसारि ॥१४॥
जो जिणधम्महं बूझइ भेउ, व्रतु एकादसमउं निसुणेउ ।
पोसह तणउ करउ उपवासु, जिम तुम्हि पामउ सिद्धिहिं वासु ॥१५॥
व्रत बारमउं भविय निसुणेहु अतिथिदानु फल भणियइ एहु ।
चंदणि सूपि किया कोमासि वीर पराविउ छट्ठइ मासि ॥१६॥
पारणए तहिं वीरज जिणिंद जय जयकार करइं सुरइंद ।
कंचण कोडि बारस विसेस, अमर वरीसइं तत्थ पएसि ॥१७॥
सती एक सलहीजइ नारि, दिन्नु दानु को मास वियारि ।
कोसंबी नयरी सुविसाल, जगि जयवंती चंदणबाल ॥१८॥
बारह व्रत श्रावक संभलउ, भावु भगति मन अविचलु धरउ ।
सव्वं(च्च)उं वयणु सुणउ सहु कोइ, जीवदया विणु धर्मु न होइ ॥१९॥

॥ इति श्रावकव्रत चतुष्पदिका ॥